महिलाओं में मातृत्व की संमस्याएँ तथा उसका निदान

डॉ. शिल्पी शिवानी*

सार–संक्षेप–स्वास्थ्य मनुष्य का मूलभूत अधिकार है और मनुष्य का स्वस्थ रहना समाज के हित में है। स्वास्थ्य एवं व्यक्ति का विकास किसी भी राष्ट्र के सामाजिक व आर्थिक विकास का अभिन्न अंग होता है। स्वास्थ्य का अर्थ केवल यह नहीं है कि मनुष्य को रोग, बीमारी और अपंगता न हो। स्वास्थ्य का अर्थ यह है कि मनुष्य शारीरिक, मानसिक और सामाजिक दृष्टि से पूर्णतः स्वस्थ हो। सृष्टि की रचना के समय पृथ्वी पर स्त्री और पुरूष को साथ रखा गया। यह प्रकृति का नियम है। इसलिए प्रत्येक जीवित प्राणी में नर और मादा पाये जाते है। इन नर व मादा के प्रजनन अंगों की रचना ईश्वर ने इस प्रकार की है कि गर्भाधान की क्रिया द्वारा एक जीव को जन्म दिया जाता है। पुरूष एवं स्त्री के प्रजनन अंगों की संरचना एवं कार्यो में अंतर पाया जाता है। संतानोत्पति का मुख्य आधार शुक्राणु तथा अण्डाणु का संयोग होना है। गर्भाधान के उपरांत भ्रूण के शरीर की अभिवृद्धि माता की रक्त–कोशिकाओं के द्वारा होती है। एक सफल गर्भाधान के साथ हर गर्भवती स्त्री को इस अवस्था में उत्पन्न होने वाली समस्याओं और उसके निदान तथा गर्भस्थ संतान के विकास को पूर्णतः ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। उसकी जरा–सी असावधानी उसके या विकासशील गर्भ के लिए खतरा उत्पन्न कर सकती हैं। शारीरिक स्वास्थ्य का यों तो हर समय ध्यान रखना चाहिए, किंतु गर्भावस्था में आहार–विहार में संयम तथा संतुलन रखना अनिवार्य होता है।

परिचय–मातृत्व नारी जीवन की चरम सार्थकता है। प्रत्येक नारी को प्रकृति ने माँ बनने के लिए उत्पन्न किया है। संतान को जन्म देना प्राकृतिक प्रक्रिया है, किंतु उसका पालन–पोषण सीखना आवश्यक है। प्रत्येक युवक–युवती को दांपत्य जीवन में प्रवेश करने से पूर्व पति–पत्नी, माता–पिता बनने की योग्यता प्राप्त करनी चाहिए। दांपत्य जीवन सुखों की सेज नहीं, उत्तरदायित्वों और कर्त्तव्यों का कंटीला ताज है।

***पिता–श्री त्रिलोक नाथ ठाकुर ग्राम–सुहथ, पोस्ट–पुतई, जिला–दरभंगा (बिहार)**

गर्भाधान के लगभग नौ माह के बाद बच्चे का जन्म होता है। गर्भकाल में आमतौर पर 280 दिन लगते हैं। स्त्री शरीर में गर्भ का स्थापित होना, माता–पिता के लिए बड़ी महत्वपूर्ण घटना होती है। शिशु प्रकृति द्वारा प्रदत्त उच्च श्रेणी के सौन्दर्य की अनमोल देन है। संसार में आने के पूर्व तथा आने के बाद होनेवाले शिशु के विकास पर सृष्टि की निरंतरता निर्भर करती है। इसलिए इसे एक विशिष्ट महत्व की घटना समझा जाता है। गर्भधारण के लक्षणों का शुरू में ही पता लगाना कुछ कठिन होता है, परन्तु प्रकृति ने इसकी सूचना देने के लिए विशेष व्यवस्था कर रखी है। इन लक्षणों से सिद्ध होता है कि गर्भ की स्थापना हो चुकी है और अब एक नए जीव का निर्माण आरम्भ हो गया है।

संतान को जन्म देना प्राकृतिक प्रक्रिया है। किंतु उसका पालन–पोषण सीखी जाने वाली वस्तु है। जब तक माता स्वयं प्रशिक्षित नहीं होगी, अपनी संतान को प्रशिक्षित नहीं कर सकती। आज के बच्चे कल देश के नागरिक बनेंगे। बच्चे राष्ट्र की संपत्ति कहे जाते हैं। माता–पिता इस संपत्ति के मालिक नहीं, अमानत की देखभाल करनेवाले होते हैं। इस अमानत को आप संभाल कर रखिए। प्रत्येक युवक–युवती को दांपत्य जीवन में प्रवेश करने से पूर्व पति और पत्नी, पिता और माता बनने की योग्यता प्राप्त करनी चाहिए। दांपत्य जीवन सुखों की सेज नहीं, उत्तरदायित्वों और कर्त्तव्यों का कंटीला ताज भी होता है। एक ओर ऐसी स्त्रियाँ हैं जो माँ तो बन जाती हैं, किंतु संतान का सही ढंग से लालन–पालन करना नहीं जानती हैं। दूसरी ओर आधुनिक स्त्रियाँ हैं, जिन्हें मातृत्व रास नहीं आता। माता बन जाना इनके लिए एक दुर्घटना जैसा अनुभव होता है। संतान पालने में ये बेगार टालने जैसा कार्य करती हैं। बच्चों की देखभाल इनके लिए गले पड़ा ढोल होता है। यदि ये चाहें तो अपनी संतान को देश का सुयोग्य नागरिक बना सकती हैं। इसके लिए इनके पास क्षमता भी है, सुविधा भी है और साधन भी है।

गर्भावस्था मिश्रित फलप्रद होती है। इसमें एक ओर जहाँ कई कष्ट उठाने पड़ते हैं, वहीं दूसरी और बच्चे की किलकारी सुनने को मन व्याकुल रहता है। गर्भावस्था लगभग नौ माह की होती है, जिसे तीन भागों में विभक्त करके हम उन अवधियों की विस्तृत जानकारी यहाँ प्रस्तुत किया जाता है। गर्भावस्था के प्रथम तीन माह बड़े नाजुक होते हैं। उल्टी आना, रक्तस्राव होना, पेट में दर्द, बुखार आदि की शिकायत में विशेषज्ञ से सलाह लें। अधिक उल्टी आने पर शरीर में पानी की कमी हो जाती है। रक्तस्राव का कारण संभावित गर्भपात हो सकता है। इस अवस्था में पेट दर्द होता है। इसके अलावा कभी कभी नसों में दर्द होता है। ऐसे में पेट दर्द बढ़ जाता है। महिला पीली अथवा सफेद पड़ जाती है। कभी–कभी रक्तचाप इतना कम हो जाता है कि वह बेहोश भी हो सकती है। यह एक गंभीर

समस्या है। इसका उपचार तुरंत कराने के लिए निकट के अस्पताल या प्रसूतिगृह से सम्पर्क करें।

गर्भपात के समय रक्तस्राव के साथ दर्द होता है और मांस के कुछ टुकड़े भी गिरते हैं। समय से उपचार होने पर खून की कमी, इन्फेक्शन आदि से बचा जा सकता है। गर्भपात के कई कारण होते हैं, लेकिन बार–बार गर्भपात होना एक गंभीर समस्या है। अधिक बुखार, मधुमेह, थायरॉइड ग्रंथि की गड़बड़ी, रूबैला, टोक्सोप्लाज्मा, मलेरिया, पीलिया, भ्रूण में आंतरिक खराबी, मानसिक असंतुलन, फोलिक एसिड एवं विटामिन 'ई' की कमी तथा कुछ दवाईयाँ आदि गर्भपात के कारण हो सकते हैं।

कई बार भ्रूण बढ़ना रूक जाता है। इस अवस्था की जानकारी अल्ट्रासाउण्ड परीक्षण से प्राप्त की जा सकती है। हाइडेटीफॉरमोल नामक रोग होने पर शिशु पनपने की जगह पिंड–सा हो जाता है, जो देखने में अंगूर के गुच्छे की तरह लगता है। यह स्थिति गंभीर रूप ले सकती है। अधिक रक्तस्राव होने पर गर्भिणी की हालत बेहोशी की अवस्था तक पहुँच जाती है। कभी–कभी हाइडेटीफॉरमोल रोग कैंसर की तरह शरीर के अन्य भागों में भी फैल जाता है। ऐसे में तुरंत ही विशेषज्ञ के पास पहुँचे। इनके अलावा शुरू के तीन महीनों में एक्स–रे करवाने से बचें। कोई भी दवा स्वयं न लें। गलत दवा गर्भ में पनप रहे भ्रूण पर असर डाल सकती है। इस कारण उसमें मानसिक और शरीरिक विकलांगता आने की आशंका होती है।

गर्भावस्था के दूसरे तीन माह का चरण अन्य दो तिमाहियों की अपेक्षाकृत अच्छा है। लेकिन इस समय भी कोई संक्रामक रोग होने पर तुरंत सावधान हो जाएं तथा विशेषज्ञ से सपंर्क करें। कभी–कभी अचानक पेट में दर्द अथवा पानी की शिकायत हो सकती है। इसके अलावा रक्तस्राव भी हो सकता है। इस कारण गर्भपात और पहले बताए गए रोग हो सकते हैं। खून की कमी होने से चक्कर आना, घर के कामों में मन न लगना और शारीरिक थकावट हो सकती है। ऐसे में तुरंत परीक्षण द्वारा हीमोग्लोबिन की जाँच करवाएं।

गर्भावस्था के आखिरी तीन माह में खून की कमी, अधिक रक्तचाप, रक्तस्राव, शिशु का असामान्य रूप से बढ़ना, वजन में अचानक बढ़ोतरी, वजन का न बढ़ना, शिशु का स्पंदन नहीं महसूस होना, पैरों व शरीर में सूजन, दौरे पड़ना, अचानक बोहोश हो जाना आदि लक्षण खतरनाक है। इनके होने पर तुरंत विशेषज्ञ से संपर्क करें। इसके अतिरिक्त यदि महिला को गर्भ से पूर्व हृदय रोग, मधुमेह, उच्च रक्तचाप, सांस व फेफड़ों के रोग, टी.बी., गुर्दों की बीमारी या रतिज रोग हो, तो इनका भी सही समय पर उपचार आवश्यक है। इनमें से कुछ रोगों के बारे में थोड़ी जानकारी यहाँ प्रस्तुत है।

गर्भावस्था के दौरान शरीर के प्रत्येक अंग विशेषकर दांत, नाखून, जांघों एवं बालों की सफाई पर पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए। यदि दांतों में किसी प्रकार की बिमारी हो तो समय रहते उसका उपचार करने से सेप्टीसीमिया बीमारी से बचा जा सकता है। कई महिलाओं को लम्बे नाखून रखने का शौक होता है, लेकिन वे उसकी सफाई की और ध्यान नहीं दे पाती है। नाखूनों के बड़े होने पर खाना खाते वक्त उनमें जमा गंदगी मुँह में जाने से इन्फेक्शन का खतरा बना रहता है।

गर्भावस्था में वातावरण का शिशु पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इस वातावरण के द्वारा ही अनेक महत्वपूर्ण कारकों का नियमन होता है। जो शिशु–निर्माण की आंतरिक प्रक्रिया में बहुत सहायक होते हैं। यहाँ ओशो गर्भ पर पड़ने वाले वातावरण के प्रभाव का विश्लेषण करते हैं–गर्भावस्था में माँ की मनःस्थिति का शिशु निर्माण की प्रक्रिया पर बहुत प्रभाव पड़ता है। वास्तव में, केवल गर्भ धारण करने से ही कोई स्त्री माँ नहीं हो जाती बल्कि वह माँ बनती है बच्चे की चेतना को एक विशेष दिशा में गति देने के कारण। बच्चे तो कोई मादा पशु भी अपने गर्भ में पालती है, सभी पशु ऐसा करते हैं। आज नहीं तो कल, मशीनें यह काम करेंगी। भविष्य मे बच्चों का मशीनों के द्वारा पालन–पोषण असंभव नहीं है। इस जगत में बहुत कम माँएं ऐसी हैं जिन्होंने मातृत्व की सही जिम्मेदारी को निभाया है। माँ होना सर्वाधिक कठिन कार्य है। नौ माह तक शिशु की चेतना को निरंतर एक दिशा देना आसान नहीं है। यदि इन नौ महीनों में, माँ क्रोध करती है....और फिर कल जब वह एक क्रोधपूर्ण बच्चे को जन्म देगी और जब बच्चा क्रोध करेगा तब वह उसमें दोष निकालेगी, उसे डांटेगी और आश्चर्यचकित होगी कि किसने उसे बिगाड़ा है, वह किस बुरी संगत में पड़ गया है। अनेक माँएं मेरे पास अपने बच्चों की यही शिकायतें लेकर आती हैं कि वे बुरी संगति में पड़े हुए हैं लेकिन वे यह बात भूल गई हैं कि उन्होंने स्वयं ही ये बीज अपने बच्चों में डाले हैं। वे स्वयं ही बच्चों के ऐसे विकास की जिम्मेदार हैं। बच्चे तो मात्र उसे प्रकट कर रहे हैं। यह सच है कि बीज बोना और उसमें अंकुर फूटना दो अलग–अलग घटनाएं हैं। हमें दोनों घटनाओं के बीच कोई संबंध दिखाई नहीं देता क्योंकि दोनों के बीच लम्बा समयांतराल होता है। निम्न उदाहरण में माँ की मनःस्थिति का बच्चे पर पड़ने वाले प्रभाव का विश्लेषण कर रहे हैं।

गर्भावस्था के दौरान कम से कम तीन बार डॉक्टर, नर्स, प्रशिक्षित दाई या स्वास्थ्य कार्यकर्ता से जाँच करवानी चाहिए। अगर हो सके तो जाँच हर महीने करवानी चाहिए। जाँच से पता चलता है कि माँ एवं बच्चे दोनों का स्वास्थ्य कैसा है और उन दोनों का ठीक से विकास हो रहा है या नहीं। जब महिला पहली बार जाँच करवाने स्वास्थ्य केंद्र जाती है तो वहाँ उसका नाम दर्ज होता है और उसे

जच्चा–बच्चा रक्षा कार्ड बनाकर दिया जाता है। यह कार्ड गर्भवती महिला और पैदा होने वाले बच्चे दोनों के लिए होता है। गर्भवती महिला जब भी जाँच करवाने जाए तो उसे अपने साथ यह कार्ड लेकर जाना चाहिए। हर बार की जाँच को इस कार्ड में दर्ज किया जाता है जिससे अगली बार जाँच करते समय यह पता रहे कि पिछली बार कौन–कौन सी जाँच हुई थी और पिछली बार से लेकर अब तक महिला और बच्चे में क्या बदलाव आए हैं।

चिकित्सा विज्ञान के अनुसार गर्भावस्था में भ्रूण के निर्माण के कारण शरीर में तीव्र गति से कई परिवर्तन होते है। उपचय की क्रियाएँ तीव्र गति से होने लगती है, जो माँ के पोषक तत्वों की आवश्यकता को बढ़ा देती है। गर्भावस्था में रक्त के संगठन में भी परिवर्तन आ जाता है। रक्त में प्लज्मा की मात्रा लगभग 50 प्रतिशत तक रह जाती है, परन्तु लाल–रक्त कणों में 20 प्रतिशत की वृद्धि होती है। अतः हीमोग्लोबिन की सान्द्रता उसकी मात्रा में वृद्धि होने के बाबजूद भी कम हो जाती है। भ्रूण विकास के साथ–साथ गर्भवती स्त्री का भार भी बढ़ता है। एक स्वस्थ्य माता का भार 10–12 किलोग्राम औसतन बढ़ना चाहिए।

संतानोत्पति की अवस्था में प्रोटीन, कैल्सियम, फॉस्फोरस और लौह–लवण की अधिक आवश्यकता पड़ती है। गर्भकाल के सातवें, आठवे और नवे माह में शिशु का विकास अत्यंत तीव्र गति से होता है। वह माँ के रक्त से प्रोटीन, कैल्सियम, फॉस्फोरस, लौह–लवण, विटामिन तथा अन्य खनिज लवण अधिक मात्रा में शोषित करता है। भ्रूण इन्हीं अंतिम तीन महीनों में अपने वजन का 3/4 भाग प्राप्त करता है। फलस्वरूप नये उत्तकों के निर्माण के लिए निर्माणकारी पदार्थ की माँग अधिक हो जाती है। संतानोत्पति तथा संतति रक्षा योजना के अंतर्गत इनको सरकारी स्तर पर पोषक तत्व मुहैया कराया जा रहा है, जिसका प्रभाव गर्भिणी तथा प्रसूति महिलाओं पर अच्छा है। इन कार्यक्रमों के अंतर्गत इन्हें कैलोरीज, प्रोटीन, लौह–लवण, आयोडीन, विटामिन आदि उपलब्ध कराये जा रहे है, जो माता–शिशु दोनों के स्वास्थ्य रक्षा में लाभकारी है।

निष्कर्ष–भारत तथा अन्य विकासशील राष्ट्रों में गर्भवती स्त्री के आहार में पोषक तत्वों की कमी के कारण मातृ एवं शिशु मृत्युदर अधिक होती है। कुपोषण तथा अपर्याप्त पोषण गर्भधारण की क्षमता को भी प्रभावित करते है। गर्भकाल में शरीर के भार में कमी होने के कारण अनेक परेशानियाँ होती है, एवं अनेक प्रकार के रोग हो जाते है। जैसे–गर्भावस्था के रोग, अपरिपक्व शिशु का जन्म, गर्भपात एवं मरे हुए शिशु का जन्म आदि। विश्व स्वास्थ्य संगठन के चिकित्सकों ने विभिन्न अनुसंधानों द्वारा यह प्रमाणित किया है कि जिस माता के आहार मे उपयुक्त मात्रा में पोषक तत्वों का समिश्रण होता है, उसे गर्भकाल में अपोषक और अनुपयुक्त

भोजन करने वाली माता की अपेक्षा रोगों से ग्रसित होने का भय पूरे समय तक अधिक सुरक्षित तथा स्वस्थ होती है। प्रसव के समय उन्हें अधिक परेशानी नहीं झेलनी पड़ती है तथा उसका शिशु भी स्वस्थ एवं हृष्ट–पुष्ट रहता है। अतः हर गर्भवती स्त्री को अपने स्वास्थ्य के प्रति जागरूक होना चाहिए।

संदर्भ स्रोतः–

1. प्रो. गुड एण्ड हॉट, 1981, इनलूएन्स ऑफ स्टेटिसटिक्स ऑन रिसर्च, रिसर्चजनरनल, न्यूयार्क, पृ. 17.
2. प्रो. श्रीमती यंग, 1985, रिसर्च मेथड एण्ड इटस एप्लीकेशन, पृ. 23.
3. प्रो. गुड एण्ड हॉट, 1981, इनलूएन्स ऑफ स्टेटिसटिक्स ऑन रिसर्च, रिसर्चजरनल, न्यूयार्क, पृ. 25.
4. डॉ. पी.वी.यंग, 1988, एपलीकेशन ऑफ अनभेस्टीगेशन इन प्योर रिसर्च, न्यूयार्क, पृ. 102.
5. यूनिसेफ, 1984–एन. एनालाइसिस ऑफ दि सिच्युएशन ऑफ दि चिल्ड्रेन इन इंडिया, न्यू देलही, पृ. 156